जीवजगत में उभयलिंगता

अरविन्द गुप्ते

जैव-विकास के लिहाज़ से प्रजनन जीव के जीवन का प्रमुख लक्ष्य है। इस उद्‌देश्य की पूर्ति के लिए लैंगिक जनन करने वाले जीवों में प्रजनन के दौरान दो कोशिकाओं - अण्डाणु और शुक्राणु का मिलन होता है। यदि ये दोनों कोशिकाएँ दो जीवों से मिलें तो इसे क्रॉस फर्टिलाइज़ेशन कहते हैं। कुछ मौकों पर एक ही जीव द्वारा दोनों मातृ-पैतृक कोशिकाओं का निर्माण एवं उनका आपस में मिलन होता है। इसे सेल्फ फर्टिलाइज़ेशन कहा जाता है। यह क्रिया आन्तरिक परजीवियों में काफी सामान्य है। उदाहरण के लिए टेपवर्म जिसे क्रॉस फर्टिलाइज़ेशन के लिए साथी मिलने की सम्भावना काफी कम होती है, स्वयंनिषेचन इसके लिए फायदेमन्द साबित होता है। इस सिलसिले को आगे बढ़ाएँ तो काफी जीवों में नर और मादा जनन अंग साथ-साथ पाए जाते हैं। इन्हें उभयलिंगी जीव कहा जाता है।

जीव-जगत में उभयलिंगी जीवों का पाया जाना एक आम बात है। अधिकांश पौधे उभयलिंगी होते हैं यानी एक ही फूल में दोनों जननांग या एक ही पौधे पर नर और मादा फूल पाए जाते हैं। जन्तुओं में उभयलिंगता का सबसे परिचित उदाहरण केंचुआ है, किन्तु जन्तुओं के अन्य समूहों में भी उभयलिंगता अपेक्षाकृत अधिक प्रजातियों में पाई जाती है। इनमें जोंक, घोंघे, शम्बुक (घोंघे के समान किन्तु बिना कवच वाले जन्तु जो बरसात के मौसम में ज़मीन पर रेंगते हुए पाए जाते हैं और अपने पीछे एक चमकदार, गाढ़े द्रव की लाईन छोड़ते जाते हैं। इन्हें अँग्रेज़ी में स्लग कहते हैं।) और मछलियों की कई प्रजातियाँ शामिल हैं।

उभयलिंगता को अँग्रेज़ी में हर्माफ्रोडाइटिज़्म (Hermaphroditism) कहते हैं। इस शब्द के मूल में एक रोचक कहानी है। यूनान की पौराणिक कथा के मुताबिक हर्मीज़ नामक एक देव और एफ्रोडाइटी नामक बहुत सुन्दर देवी की सन्तान का नाम हर्माफ्रोडाइटॉस रखा गया। इस युवक को एक परी से इतना अधिक प्रेम हो गया कि भगवान से उन्होंने दोनों को एक शरीर बना देने का अनुरोध किया। भगवान ने यह मंज़ूर कर लिया और हर्माफ्रोडाइटॉस ऐसा जीव बन गया जो पुरुष और स्त्री, दोनों था। अँग्रेज़ी भाषा में इस शब्द का उपयोग पन्द्रहवीं शताब्दी से उन जीवधारियों के लिए किया जाने लगा जिनमें नर और मादा, दोनों जननांग पाए जाते हैं।

उभयलिंगी जन्तु दो प्रकार के होते हैं: क्रमिक उभयलिंगी (Serial hermaphrodites) और समकालिक उभयलिंगी (Synchronous hermaphrodites)।

क्लाउनफिशः मादा के न रहने पर बड़े आकार का प्रजननक्षम नर, समूह में मादा के स्थान की पूर्ति करता है।

पुम्पूर्वता: समुद्री गेस्ट्रोपोड, लिट्टोरिनिमोर्फा अपने जीवन की शुरुआत नर के रूप में करता है और बाद में मादा बन जाता है। यहाँ चित्र में लिट्टोरिनिमोर्फा का ढेर लगा हुआ है। जैसे ही किसी मादा और नर का समागम शुरू होता है, कई नर पहले वाले नर के ऊपर बैठने लगते हैं। उन्हें इन्तज़ार है कि पहले वाला नर जल्द ही मादा के रूप में तब्दील हो जाएगा। तब वे उस नई मादा से समागम कर सकेंगे।

क्रमिक उभयलिंगी

ये जन्तु जन्म के समय एक लिंग के होते हैं (यानी नर या मादा) किन्तु अपने जीवनकाल में ही लिंग परिवर्तन कर दूसरे लिंग के बन जाते हैं। इस प्रकार की उभयलिंगता मछलियों, कई घोंघों और कुछ पौधों में पाई जाती है। अधिकांश क्रमिक उभयलिंगी अपने जीवनकाल में एक ही बार लिंग परिवर्तन करते हैं, किन्तु कुछ प्रजातियों में यह क्रिया कई-कई बार होती है।

क्रमिक उभयलिंगता में दो प्रकार होते हैंः पुम्पूर्वता (protandry) उस अवस्था को कहते हैं जिसमें जीवधारी में जन्म के समय नर प्रजननांग होते हैं और बाद में वे मादा बन जाते हैं। क्लाउनफिश (amphiprion sp.) नामक मछली इसका रोचक उदाहरण है। ये रंगीन मछलियाँ समुद्र में मूँगे की चट्टानों के पास झुण्डों में रहती हैं। एक झुण्ड में एक बड़े आकार की मादा मछली और उससे कुछ छोटा प्रजननक्षम नर होता है। इनके अलावा झुण्ड में छोटे आकार के कई नर होते हैं जो प्रजनन नहीं कर सकते (इन्हें अप्रजननक्षम कहते हैं)। यदि किसी कारण से झुण्ड में से मादा हट जाए या मर जाए तो प्रजननक्षम नर, मादा बन जाता है और सबसे बड़ा अप्रजननक्षम नर, प्रजननक्षम नर बन जाता है।

स्त्रीपूर्वता (protogyny) में इसका उल्टा होता है, यानी जन्म के समय मादा होने वाला जीवधारी बाद में नर में तब्दील होता है।

दोनों भूमिकाएँ एक साथः केंचुआ एक उभयलिंगी जीव है जिसके नर और मादा, दोनों जननांग एक ही समय सक्रिय रूप से प्रजनन में शामिल होते हैं। केंचुए प्रजनन के दौरान अपने शरीर के दो बिन्दुओं पर जनन क्रिया कर रहे होते हैं। एक केंचुआ एक बिन्दु पर नर की तरह दूसरे केंचुए को शुक्राणु दे रहा है, तो दूसरे बिन्दु पर वह मादा की तरह अपने साथी से शुक्राणु ग्रहण कर रहा है।

समकालिक उभयलिंगी

इस प्रकार के उभयलिंगी जन्तुओं में जन्म से ही नर और मादा, दोनों प्रकार के जननांग होते हैं। केंचुआ, जोंक और कई प्रकार के घोंघों में इस प्रकार की उभयलिंगता पाई जाती है। किन्तु दोनों प्रकार के जननांग होते हुए भी इनमें आम तौर पर स्वयं निषेचन नहीं होता क्योंकि जैविक दृष्टि से आनुवंशिक सामग्री का आदान-प्रदान

हॅमलेटः उभयलिंगी होने के बावजूद इस मछली में स्वयं निषेचन नहीं होता। दो मछलियाँ बारी-बारी से एक-दूसरे को शुक्राणु देकर निषेचन की क्रिया सम्पन्न करती हैं। यह समकालिक उभयलिंगता का एक और उदाहरण है।

मक्के के एक पौधे में नर और मादा, दोनों तरह के फूल होते हैं। जिसे भुट्टा कहते है वह वास्तव में, छिलके में ढका मादा फूलों का समूह होता है। इनकी वर्तिकाएँ सुनहरी बाल जैसी रचनाओं के रूप में छिलके से बाहर निकली होती हैं। पौधे के शीर्ष पर नर फूल और तने पर मादा फूल। लेकिन यह ज़रूरी नहीं है कि दोनों फूल एक साथ, एक समय पर खिलें। नर फूल के परागकण बिखरते हैं जो मादा फूल की वर्तिका तक पहुँचकर निषेचन की क्रिया को पूरा करते हैं। यहाँ यह भी सम्भव है कि मादा फूल का निषेचन किसी अन्य पौधे के परागकण द्वारा हो।

वांछनीय होता है। मैथुन के समय दो उभयलिंगी जन्तु शुक्राणुओं का आदान-प्रदान करते हैं। इसके फलस्वरूप दोनों जन्तुओं के अण्डाणुओं का निषेचन होता है और दोनों जन्तु कुछ समय तक इन निषेचित अण्डाणुओं को अपने शरीर में रखने के बाद उन्हें अण्डों के रूप में शरीर से बाहर निकाल देते हैं। भ्रूणों का विकास पूरा हो जाने के बाद अण्डों से बच्चे निकल आते हैं।

यद्यपि उभयलिंगी जन्तु स्वयं निषेचन से बचने की कोशिश करते हैं, आवश्यकता पड़ने पर कुछ उभयलिंगी जन्तु स्वयं निषेचन का सहारा भी लेते हैं। बनाना-स्लग नामक शम्बुक प्रजनन के लिए साथी न मिलने पर मजबूरी में स्वयं निषेचन अपनाता है।

हॅमलेट नामक समुद्री मछली उभयलिंगी तो होती है, किन्तु इसमें स्वयं निषेचन नहीं होता। जब दो हॅमलेट मछलियाँ मिलती हैं तब वे बारी-बारी से नर और मादा की भूमिका अदा करती हैं। एक मछली अपने अण्डाणुओं को पानी में छोड़ती है और दूसरी मछली अपने शुक्राणु इन अण्डाणुओं पर छोड़ कर उन्हें निषेचित कर देती है। अगले चक्र में ये मछलियाँ क्रमशः अपनी भूमिका बदल कर प्रजनन करती हैं।

पौधों में उभयलिंगता

पौधों में दो प्रकार की उभयलिंगता पाई जाती है। अधिकांश पौधों में एक ही फूल में नर और मादा, दोनों अंग पाए जाते हैं। एक अन्य प्रकार की उभयलिंगता में नर और मादा जननांग होते तो अलग-अलग फूलों में हैं, किन्तु ये दोनों प्रकार के फूल एक ही पौधे पर पाए जाते हैं।

केंचुआ प्रजनन कैसे करता है?

केंचुए में प्रजनन प्रक्रिया समझने से पहले केंचुए की शारीरिक बनावट पर गौर कर लेना बेहतर होगा। केंचुए का शरीर बहुत से छल्लेनुमा खण्डों से मिलकर बना होता है। भारतीय प्रजातियों में खण्डों की संख्या 100-120 तक होती है। यदि केंचुए के मुँह की ओर से खण्डों को गिनना शुरू करें तो पाँचवें से नौवें खण्ड के हरेक जोड़ पर दो-दो थैलियाँ होती हैं जिनमें शुक्राणु रखे जा सकते हैं। लेकिन केंचुए के अपने शुक्राणु इसमें नहीं रखे होते। चौदहवें खण्ड पर अण्डवाहिनी का मुँह खुलता है। सत्रहवें से उन्नीसवें खण्ड पर केंचुए के नर जननांग से आने वाले दो-दो छिद्र होते हैं।

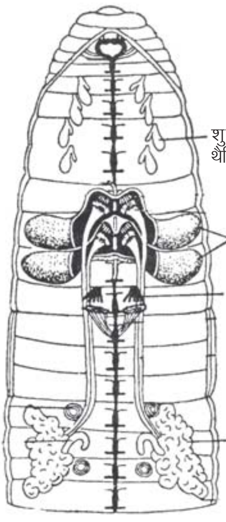

केंचुए में प्रजनन की प्रक्रिया दो चरणों में होती है। पहले चरण में दो केंचुओं का मिलन होना ज़रूरी है। दो केंचुए इस तरह पास-पास आते हैं कि एक केंचुए का मुँह जिस ओर होता है, दूसरे का मुँह उसके विपरीत दिशा में होता है। इस अवस्था में एक केंचुए के नर जननांग दूसरे की शुक्राणु थैलियों से सट जाते हैं। यहाँ दोनों केंचुए एक-दूसरे की शुक्राणु थैली में शुक्राणु छोड़ते हैं।

प्रजनन का दूसरा चरण इस तरह शुरू होता है। केंचुए के चौदहवें-सोलहवें खण्ड के बीच एक फूला हुआ चमड़ी के रंग का हिस्सा नज़र आता है। यहाँ लसलसे पदार्थ से एक अँगूठीनुमा रचना बनती है, इसे प्रजनन थैली कहते हैं। जब प्रजनन थैली पूरी तरह बन जाती है तो अण्डवाहिनी उसमें अण्डा छोड़ देती है। अब केंचुआ अपनी मांस-पेशियों की मदद से इस थैली को अपने मुँह की ओर सरकाता जाता है। प्रजनन थैली जब शुक्राणु थैलियों पर पहुँचती है तब इन थैलियों में रखे शुक्राणु प्रजनन थैली में पहुँचकर अण्डाणु को निषेचित करते हैं। प्रजनन थैली को केंचुआ अपने मुँह की ओर से निकाल देता है। इस लचीली थैली को ककून कहते हैं। लगभग बारह हफ्ते बाद इसमें से शिशु केंचुए बाहर आएँगे।

केंचुओं में शुक्राणुओं का लेन-देन

जिन पौधों में उभयलिंगी फूल होते हैं वे स्वयंनिषेचन से बचने के लिए प्रायः यह तरकीब अपनाते हैं कि नर और मादा जननांग एक साथ परिपक्व नहीं होते। कुछ प्रजातियों के फूलों में नर जननांग पहले परिपक्व हो जाते हैं (पुम्पूर्वता) ताकि यदि इस फूल के परागकण उसी फूल के मादा अंगों तक पहुँच भी जाएँ तो भी निषेचन नहीं होगा क्योंकि मादा अंग परिपक्व ही नहीं हुए होते हैं। इन परागकणों से किसी अन्य फूल के मादा अंगों का ही निषेचन हो सकता है जो परिपक्व हो चुके हैं। स्त्रीपूर्वता में इसका उल्टा होता है यानी मादा जननांग पहले परिपक्व हो जाते हैं ताकि उनका निषेचन किसी अन्य फूल से आए हुए परागकणों से ही हो पाए।

जीवधारियों में उभयलिंगता

जन्तुओं में उभयलिंगता के विकास के बारे में कई सिद्धान्त प्रस्तुत किए गए हैं। कई सिद्धान्त तो इतने परस्परविरोधी हैं कि यह निर्णय करना कठिन हो जाता है कि वास्तव में माज़रा क्या है। किन्तु यह स्वाभाविक भी है। जीवधारियों में उभयलिंगता बहुत पुराने समय से चली आ रही है और इसके विकास के कोई प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रमाण या साक्ष्य नहीं मिले हैं। हर सिद्धान्त किसी एक छोटे बिन्दु पर आधारित होता है। बाद में कोई अन्य छोटा बिन्दु मिल जाने पर इसका विरोधी सिद्धान्त प्रस्तुत कर दिया जाता है। यहाँ विभिन्न सिद्धान्तों के संक्षिप्त विवरण दिए जा रहे हैं। अच्छा होगा कि सही-गलत का निर्णय अभी लम्बित रखा जाए।

जैव-विकास की पुरातन धारणा के अनुसार जैव-विकास एक सीधी रेखा में चलता है और मनुष्य इस रेखा के आखिर में आता है। इसे मानें तो मनुष्य सबसे अधिक विकसित जीवधारी है। चूँकि, मनुष्य ने जैव-विकास की कल्पना की है, अतः स्वाभाविक है कि उसने अपने आप को विकास शिरोमणि की उपाधि से नवाज़ा। जैव-विकास की एक रोचक पुस्तक में कहा गया है कि यदि यह काम किसी घोड़े ने किया होता तो घोड़े ज़रूर जैव-विकास के शिखर पर होते। इस पुरानी धारणा के अनुसार उभयलिंगता एक आदिम यानी पिछड़ेपन का लक्षण है।

किन्तु जैव-विकास की आधुनिक धारणा के अनुसार विकास कभी सीधी रेखा में नहीं चलता। इसमें कई शाखाएँ और उपशाखाएँ निकलती हैं। इसके परिणामस्वरूप जैव-विकास का चित्र एक बहुत सारी शाखाओं वाली घनी झाड़ी के समान दिखाई देता है। जीवधारियों में समय-समय पर ऐसे अंगों और लक्षणों का चयन होता रहता है जो उनके लिए उनके समान अन्य जीवधारियों की तुलना में कुछ अधिक लाभदायक होते हैं। इसका एक बहुत अच्छा उदाहरण जन्तुओं में पंखों का विकास है। जन्तुओं के तीन ऐसे समूहों, जिनमें कोई निकट का रिश्ता नहीं है,

यानी कीटों, पक्षियों और चमगादड़ों में, उड़ने के अंगों का विकास हुआ। इसी प्रकार, उभयलिंगता का विकास भी अलग-अलग समूहों में अलग-अलग समय पर हुआ, और यह पिछड़ेपन का लक्षण न हो कर उस प्रजाति के लिए लाभदायक चयन है। सवाल यह है कि उभयलिंगता से इन जन्तुओं को क्या लाभ होता है?

उभयलिंगता का मूल उद्देश्य उस प्रजाति या जीवधारी की प्रजनन क्षमता बढ़ाना है।

उभयलिंगता के विकास के बारे में दिए गए सिद्धान्तों का लम्बा इतिहास रहा है। डार्विन से पहले के समय में यह माना जाता था कि यदि दो जीवधारियों का आपस में मिलना कठिन हो (छितरी हुई आबादी या ऐसा पर्यावरण जहाँ रोशनी बहुत ही कम हो या अन्य किसी कारण से) तो ऐसी दशा में एक ही जीवधारी में नर और मादा, दोनों प्रजनन अंग हों तो कम-से-कम स्वयं निषेचन से तो प्रजनन का उद्देश्य हासिल हो जाएगा। किन्तु इस सिद्धान्त से इस तथ्य का स्पष्टीकरण नहीं मिलता कि उभयलिंगी जीवधारियों में यथासम्भव स्वयं निषेचन से बचने की कोशिश की जाती है। आनुवंशिकी की दृष्टि से स्वयं निषेचन से किसी प्रजाति को लाभ कम और हानि अधिक होती है क्योंकि इसमें जींस का आदान-प्रदान नहीं हो पाता।

किसी जन्तु के प्रजनन तंत्र का विकास इस प्रकार होता है कि उसकी आनुवंशिक सामग्री अगली पीढ़ी में पहुँच जाए। यह विकास न केवल इस पर निर्भर करता है कि उस जन्तु की उसकी प्रजाति के अन्य सदस्यों के साथ और उसके पर्यावरण के साथ किस प्रकार की अन्तःक्रिया होती है, अपितु इस पर भी निर्भर करता है कि उसकी प्रजाति की आबादी की संरचना किस प्रकार की है। यद्यपि उभयलिंगता के सभी उदाहरणों के लिए कोई एक स्पष्टीकरण नहीं हो सकता। जीवशास्त्र की आधुनिक विचारधारा के अनुसार इसके विकास के लिए निम्नलिखित तीन सम्भावित मॉडल सुझाए गए हैं।

घनत्व मॉडल (Density model)

यदि किसी जन्तु की प्रजाति की आबादी छितरी हुई हो या उसके सदस्य एक ही स्थान पर स्थाई रूप से चिपके रहते हों तो इस बात की सम्भावना कम होती है कि सम्पर्क में आने वाले उसी प्रजाति के सदस्य विपरीत लिंग के हों, यानी नर को मादा मिल जाए और मादा को नर। किन्तु उभयलिंगी जन्तुओं के सामने यह समस्या नहीं आती। मान लें कि किसी प्राकृतिक आपदा के कारण, किसी प्रजाति के दो ही सदस्य जीवित रह जाएँ और दोनों एक ही लिंग के हों तो पूरी प्रजाति ही समाप्त हो जाएगी। इसके विपरीत यदि ये दोनों सदस्य उभयलिंगी हों तो वे आपस में प्रजनन कर सकेंगे।

यह स्पष्टीकरण उभयलिंगता के सभी मामलों के लिए सटीक नहीं बैठता। इससे समकालिक उभयलिंगता

का स्पष्टीकरण तो मिल सकता है, किन्तु क्रमिक उभयलिंगता का नहीं मिलता।

आकार के लाभ का मॉडल (**Size advantage model**)

इससे क्रमिक उभयलिंगता के कुछ ज्ञात उदाहरणों का स्पष्टीकरण मिलता है। मान लें कि छोटे आकार के जन्तु नर का कार्य बेहतर ढंग से कर सकते हैं और बड़े आकार के जन्तु मादा का कार्य बेहतर ढंग से कर सकते हैं तो उस प्रजाति के लिए यह लाभदायक होगा कि जीवन की प्रारम्भिक अवस्था में सब नर हों और जैसे-जैसे उनका आकार बढ़े, वे मादा बन जाएँ। इसके उलट भी हो सकता है यानी कोई जन्तु प्रारम्भिक अवस्था में मादा हों और बाद में वे नर बन जाएँ।

जीन विकिरण मॉडल (**Gene dispersal model**)

यह पहले मॉडल से मिलता-जुलता है, किन्तु यह आनुवंशिकी पर आधारित है। किसी प्रजाति के लिए यह लाभदायक होता है कि उसके जींस का व्यापक फैलाव हो ताकि वे एक छोटे क्षेत्र में सिमट कर न रह जाएँ। जैसा कि हमने ऊपर देखा, प्रजनन के लिए वांछित जोड़ीदार (नर या मादा) मिलने में किन्हीं कारणों से कठिनाई आ सकती है। उभयलिंगता से इसका हल निकल सकता है, किन्तु स्वयं निषेचन होने पर आनुवंशिक सामग्री के आदान-प्रदान की कठिनाई आती है। पौधों में इसका हल पुम्पूर्वता और स्त्रीपूर्वता के माध्यम से निकला है। यद्यपि अधिकांश पौधों में उभयलिंगी फूल होते हैं, इनके मादा और नर जननांग अलग-अलग समय पर परिपक्व होते हैं। इसके फलस्वरूप स्वयं निषेचन की सम्भावना नहीं रह जाती। इसी प्रकार की व्यवस्था जन्तुओं में क्रमिक उभयलिंगता के माध्यम से उपस्थित है। यदि एक ही जन्तु की सब सन्तानें पहले नर और बाद में मादा अवस्था से गुज़रें (या पहले मादा और बाद में नर अवस्था से) तो इस बात की सम्भावना समाप्त हो जाएगी कि वे स्व-प्रजनन कर सकें।

जिन जन्तुओं की आबादी छितरी हुई होती है या आबादी में कम संख्या में जन्तु होते हैं, उनमें किसी एक लिंग (नर या मादा) के जन्तु अधिक होने पर लिंग अनुपात की आदर्श स्थिति (1:1) नहीं रह पाती और आनुवंशिक सामग्री के आदान-प्रदान की समस्या आती है। समकालिक उभयलिंगता के फलस्वरूप लिंग अनुपात 1:1 हो जाता है।

जैसा कि हमने ऊपर देखा, उभयलिंगता आम तौर पर उन जन्तुओं में पाई जाती है जो या तो आकार में छोटे होते हैं या उनमें सुरक्षा के कोई अंग नहीं होते। उदाहरण के लिए, केंचुए कई प्रकार के परभक्षियों के पसन्दीदा भोजन होते हैं। इसी प्रकार, छोटी मछलियों के जीवन को बड़ी मछलियों से हमेशा खतरा बना रहता

उभयलिंगता से एकलिंगता की ओर

युनिवर्सिटी ऑफ पिट्सबर्ग द्वारा प्रकाशित एक अनुसंधान रिपोर्ट में एकलिंगता के विकास के प्रथम चरण के कुछ साक्ष्य मिले हैं जो इस सिद्धान्त की वकालत भी करते हैं कि नर और मादा का विकास वास्तव में उभयलिंगी पूर्वजों से हुआ है।

शोध के दौरान देखा गया कि स्ट्रॉबेरी की एक जंगली प्रजाति में नर और मादा पौधों के साथ उभयलिंगी पौधे भी पाए जाते हैं। अनुमान यह है कि इस प्रजाति में उभयलिंगता से एकलिंगता की ओर परिवर्तन पूरी तरह नहीं हो पाया है और आज भी जारी है। इस अध्ययन के लिए एशमैन व रेचल स्पिगलर ने स्ट्रॉबेरी की इस जंगली प्रजाति पर ही काम किया है। इन पौधों के सेक्स क्रोमोसोम यानी गुणसूत्र पर जीन की दो स्थितियाँ होती हैं, जिनमें से एक नर में बन्ध्यता व प्रजनन क्षमता को नियंत्रित करती है, और दूसरी मादा में इन दोनों को। ऐसी सन्तति जिनमें दोनों स्थितियाँ प्रजननक्षम होती हैं, उभयलिंगी होते हैं और स्वयं निषेचन में भी सक्षम होते हैं। ऐसे पौधे जिनमें एक जगह प्रजननक्षम होती है और एक बन्ध्या होती है वे या तो नर या मादा हो सकते हैं। जिनमें दोनों स्थितियाँ ही बन्ध्या होती हैं, वे प्रजनन में अक्षम होते हैं।

एक लिंग वाले पौधे न सिर्फ इतर लिंग वालों के साथ बल्कि उभयलिंगियों के साथ भी प्रजनन कर सकते हैं, जिससे एकलिंगी पौधा पैदा कर पाने वाला उत्परिवर्तन (म्यूटेशन) उनकी सन्तानों में पहुँचकर आगे फैल सकता है। यह भी सम्भव है कि कुछ सन्तानें बन्ध्या हों परन्तु ऐसे पौधे जिनकी जीन प्रजननक्षम सन्तति पैदा करें, वे ज़्यादा सफल होंगे। एशमैन की मानें तो ऐसे में उभयलिंगियों में आपसी निषेचन में हो रही गिरावट को देखते हुए उभयलिंगी पौधों की संख्या में क्रमशः कमी की सम्भावना नज़र आती है। इसके चलते, ऐसे क्रोमोसोम जिनमें लिंग की दोनों स्थितियों में प्रजननक्षम जीन मौजूद हैं, उनकी संख्या धीरे-धीरे कम होती जाती है। और एक लिंग वाले पौधों की तादाद बढ़ती जाती है।

शोधकर्ता टिआ-लिन एशमैन का कहना है कि सेक्स क्रोमोसोम के शुरुआती विकास के सिद्धान्त और उस प्रक्रिया या रास्ता जिसे अख्तियार कर हम आज की स्थित में पहुँचे हैं, को समझने के लिए यह एक अच्छा अध्ययन है। एशमैन के अनुसार पौधों के विकास से हम प्राणियों के विकास का भी अनुमान लगा सकते हैं। हम पौधों में इस तरह का विकास इसलिए देख पाते हैं क्योंकि यह काफी बाद में हुआ है जबकि प्राणियों में सेक्स क्रामोसोम का विकास बहुत पहले हो गया था।

है। यदि सन्तान कम संख्या में पैदा हों तो इनकी प्रजाति ही नष्ट होने की नौबत आ सकती है। अतः अधिक-से-अधिक सन्तान पैदा करना इन प्रजातियों के हित में होता है। अब यह देखें कि उभयलिंगता से किसी प्रजाति को अपने सदस्यों की संख्या बढ़ाने का अवसर कैसे मिलता है।

पहले समकालिक उभयलिंगता की बात करते हैं। मान लीजिए कि केंचुओं

की किसी आबादी में 100 केंचुए हैं। यदि केंचुआ एकलिंगी जन्तु होता तो यह माना जा सकता है कि 100 में से लगभग आधी (यानी 50) मादाएँ होतीं और आधे नर। यदि एक बार में हर मादा के औसतन 20 बच्चे हों तो एक बार में लगभग 1000[1] बच्चे पैदा होते। किन्तु उभयलिंगता के कारण सभी 100 केंचुए 20-20 बच्चे पैदा कर सकते हैं। इस प्रकार एक बार में लगभग 2000 बच्चे पैदा होंगे।

क्रमिक उभयलिंगता आम तौर पर उन जन्तुओं में पाई जाती है जिनमें एक समूह के कुछ सदस्य प्रजननक्षम होते हैं और कुछ अप्रजननक्षम। कई प्रजातियों में नर और मादा में आयु से सम्बन्धित प्रजननक्षमता अलग-अलग होती है। कुछ प्रजातियों में मादा की प्रजननक्षमता आयु के साथ बढ़ती जाती है, यानी अधिक आयु वाली मादा अधिक अण्डे दे सकती है। ऐसी परिस्थिति में पुम्पूर्वता को तरजीह मिलती है ताकि बाद में मादा बनने वाले नर अधिक समय तक प्रजननक्षम बने रहें। यदि किसी प्रजाति में नर विभिन्न कारणों से कम आयु में अप्रजननक्षम हो जाते हैं तो ऐसी प्रजाति में स्त्रीपूर्वता पाए जाने की सम्भावना अधिक होती है। कुछ ऐसी प्रजातियों में भी स्त्रीपूर्वता देखी जाती है जिनमें आयु बढ़ने के साथ मादाओं की प्रजननक्षमता घटती जाती है, किन्तु ऐसा बहुत कम होता है।

उभयलिंगता से एकलिंगता के विकास का मॉडल

ऊपर दिए गए तीनों सिद्धान्तों के एकदम विपरीत एक चौथा सिद्धान्त है जिसके अनुसार शुरुआत में सब जीवधारी उभयलिंगी थे और विकास के दौरान अधिकांश उभयलिंगी जीवधारी एकलिंगी बन गए।

[1] *केंचुए में एक बार में पैदा होने वाले बच्चों की संख्या के आँकड़े काल्पनिक हैं और केवल बिन्दु को स्पष्ट करने के लिए दिए गए हैं।*

अरविंद गुप्तेः उच्च शिक्षा में एक लम्बे दौर तक प्राणीशास्त्र का शिक्षण देने के बाद डाइट, उज्जैन के प्राचार्य पद पर भी रहे हैं। 1997 में प्रशासन अकादमी, भोपाल से सेवानिवृत्त। एकलव्य के शैक्षणिक कार्यक्रमों से लम्बा जुड़ाव, इन्दौर में निवास।